IJAER/Aug-Sep 2015 /Volume-4/Issue-5 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

हिन्दी साहित्येतिहासः काल विभाजन, नामकरण और डॉ. रामविलास शर्मा

डॉ. देवेन्द्र सिंह,
व्याख्याता – हिन्दी
महारानी श्रीजया राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज0)

यह सर्वविदित तथ्य है कि आलोचना और साहित्येतिहास में आचार्य शुक्ल डॉ॰ रामविलास षर्मा के आदर्ष हैं। उनकी तीन पुस्तकें आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और हिन्दी आलोचना, हिन्दी जाति का साहित्य, लोक जागरण और हिन्दी साहित्य (भूमिका) इसका प्रमाण हैं। अनेक बातों में उनकी प्रषंसा करने के अलावा वे इस को महत्वपूर्ण मानते हैं कि, "उन्होंने साहित्य के इतिहास के अध्ययन की एक व्यवस्थित पद्धति कायम की है।"[1] वे खुले आम यह स्वीकार करते हैं कि, "षुक्ल जी अपने समय में तो इतिहास लेखन में दिग्विजयी हुए थे, उनके बाद भी उनका काल विभाजन–या हिन्दी साहित्य की मुख्यधाराओं का विभाजन–बहुत कुछ अपने मूल रूप में कायम है। कुछ लोगों ने जोर बहुत लगाया लेकिन शुक्ल जी की कायम की हुई व्यवस्था टस से मस न हुई।"[2] यदि किसी ने शुक्ल जी के काल विभाजन को चुनौती देने की कोषिष की तो वे हैं आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी। यहाँ भी डॉ॰ रामविलास शर्मा ने प्राण पण से आचार्य द्विवेदी के काल विभाजन व नामकरण का खंडन कर आचार्य शुक्ल का ही समर्थन करते हैं। उनका मानना है कि, "आदिकाल से लेकर छायावाद तक द्विवेदी जी ने उन्हीं धाराओं के हिसाब से इतिहास लिखा है जिनका विवेचन आचार्य शुक्ल ने किया था।"[3]

आचार्य शुक्ल के काल विभाजन और नामकरण को सर्वश्रेष्ठ मानने के बाद भी वे उनके मूल ढाँचे में आमूल–चूल परिवर्तन का प्रस्ताव रखते हैं। उनकी कुषलता इस बात में है कि परिवर्तन के अधिकांष प्रस्तावों की पुष्टि भी आचार्य शुक्ल के वक्तव्यों से ही करते हैं। अर्थात् वे न तो **'हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास'** लिखने का दावा करते हैं और न ही किसी **'दूसरी परम्परा की खोज'** का श्रेय लेना चाहते हैं। वे शुक्ल जी का खंडन न कर यही कहते हैं कि, "षुक्ल जी यह रास्ता दिखा गए हैं।" इसे उनकी विनम्रता व चतुराई ही मानना चाहिए अन्यथा जिसे भक्तिकाल और रीतिकाल के लिए आचार्य शुक्ल की सर्वाधिक प्रषंसा की जाती है उसे वे पूरी तरह बदलने के लिए प्रतिबद्ध हैं। कहने का आषय यह हैं कि आचार्य

शुक्ल के बाद डॉ॰ रामविलास शर्मा ही ऐसे विद्वान हैं जिन्होंने कालविभाजन और नामकरण के क्षेत्र में आचार्य शुक्ल को सच्चे अर्थों में चुनौती दी है। हमें इस पर गंभीरता पूर्वक विचार करना चाहिए।

;पद्ध आदिकाल : वीरगाथा काल

"समाज के इतिहास में प्रायः सामंतवाद के पहले के काल को **प्राचीन युग**, सामंत काल को **मध्ययुग** और पूँजीवाद काल को **आधुनिक युग** कहा जाता है। इसी आधार पर साहित्य के इतिहास का काल विभाजन भी होता है।"[4] डॉ॰ रामविलास शर्मा भारतीय साहित्य के संदर्भ में वैदिक काल से पूर्व गण समाजों के युग को प्राचीन काल, वैदिक काल से 11वीं सदी तक के बाद के युग को मध्यकाल तथा बारहवीं सदी के बाद के युग को आधुनिक काल मानते हैं। क्योंकि, "बारहवीं सदी के आसपास भारत में पुराने जनपदों का अलगाव समाप्त होता जाता है और नवीन जातियों का अभ्युदय होता है। इस काल में अपभ्रंष देषी भाषाओं के विकास में बाधक होती है और क्रमषः उसे अपना स्थान छोड़ना पड़ता है।. . . जिस समय आधुनिक जातियों का निर्माण होता है, उसी समय से समाज और **साहित्य के इतिहास में आधुनिकता की शुरूआत माननी चाहिए।** जिसे लोग मध्यकाल कहते हैं वह वास्तव में आधुनिक काल का प्रथम चरण हैं, जब समाज में उद्योग और व्यापार के विकास और प्रसार के साथ समाज में नये सम्बन्ध कायम होते हैं। साहित्य के इतिहास में काल विभाजन का आधार समाज व्यवस्था होनी चाहिए। पुरानी संस्कृति के अवषेष बहुत दिनों तक कायम रहते हैं। इससे यह सिद्ध नहीं होता कि नये युग का सूत्रपात नहीं हुआ।"[5]

परम्पराणत काल विभाजन में आदिकाल के नाम से वर्णित युग डॉ॰ रामविलास शर्मा की दृष्टि में एक तरह से संधिकाल है जहाँ मध्यकाल अपनी अंतिम सांसे गिन रहा है तथा आधुनिक भी दस्तक दे चुका है। **आदिकाल में प्रायः तीन प्रकार की साहित्य साम्रगी का डॉ॰ शर्मा ने उल्लेख किया है।** अपभ्रंष साहित्य, वीरगाथा साहित्य तथा लोक जागरण साहित्य। वे अपभ्रंष साहित्य को मध्यकालीन अर्थात सामंती साहित्य मानते और वह हिन्दी साहित्य का हिस्सा नहीं है। उनके मतानुसार, "जैसे अपभ्रंष पुरानी हिन्दी नहीं है, वैसे ही अपभ्रंष साहित्य का रचनाकाल हिन्दी साहित्य का आदिकाल नहीं है।"[6] कुछ विद्वान इसे लोक साहित्य मानते हैं तथा हिन्दी की विरासत भी मानते हैं लेकिन डॉ॰ शर्मा किसी प्रकार की दुविधा में नहीं हैं। वे लिखते हैं कि, "निस्संदेह अपभ्रंष में लोक भाषाओं के अनेक तत्व हैं, उसी तरह अपभ्रंष साहित्य में लोक साहित्य के अनेक तत्व हैं। किन्तु कुल मिलाकर अपभ्रंष साहित्य की भाषा रूढ़ भाषा है, उसी तरह अपभ्रंष साहित्य कुल मिलाकर सामंती रूढ़ियों को प्रतिबिम्बित करने वाला साहित्य है।"[7] **वीरगाथा**

साहित्य हिन्दी साहित्य का आरम्भिक चरण है। यह सामंती प्रावृत्तियों से मुक्त नहीं हो सका है। उस समय साहित्य में नवीन प्रवृत्तियों का उदय हो चुका था लेकिन राजस्थान तथा उत्तर भारत सामंतीगढ़ होने से वहाँ सामंती प्रवृत्तियाँ साहित्य पर हावी रहती हैं। वीरगाथा काल उन्हीं सामंती प्रवृत्तियों का वाहक साहित्य है। इसलिए वे लिखते हैं कि, "षुक्ल जी का आदिकाल वास्तविक मध्यकाल है, हिन्दी जनपदों के इतिहास का सामंतकाल है। आर्थिक सम्बन्धों के विकास द्वारा ये जनपद परस्पर सम्बन्ध नहीं हुए। देषी भाषाओं के समानांतर अपभ्रंष का बोलबाला है। अनेक जनपदों में अपभ्रंष देषी भाषाओं को उभरने नहीं देती, भाषा और काव्य पर अपभ्रंष की रूढ़ियों का गहरा प्रभाव है।"[8] इन्हीं सामंती प्रवृत्तियों के कारण डॉ॰ शर्मा वीरगाथा साहित्य को रीतिकाल का भी प्रारम्भ मानते हैं। इस तरह वीरगाथा साहित्य न केवल हिन्दी साहित्य का प्रारम्भ है बल्कि हिन्दी साहित्य में रीति साहित्य (दरबारी साहित्य) का प्रारम्भ है जिसका आगे हिन्दी साहित्य में विकास भी हुआ है। वे लिखते हैं कि, "आदिकाल वीरगाथा काल है, उसे हम रीतिकाल (प्रथम उत्थान) भी कह सकते हैं। वीर और श्रृंगार रसों के अतिष्योक्ति पूर्ण, चमत्कारवादी वर्णन इस काल के साहित्य की विषेषता है। केषवदास रीतिकाल (द्वितीय उत्थान) के कवि हैं, देव–बिहारी–मतिराम तृतीय उत्थान के कवि माने जा सकते हैं।"[9]

आदिकाल में भले ही सामंती प्रवृत्तियाँ प्रबल थी लेकिन वहाँ नये युग का सूत्रपात भी हो चुका था। सामंती प्रवृत्तियों से मुक्त **जातीय साहित्य** का प्रारम्भ भी इस युग में देखा जा सकता है। इसी साहित्य के आधार पर डॉ॰ रामविलास शर्मा हिन्दी के सम्पूर्ण साहित्य को आधुनिक साहित्य मानते हैं। वे **लोक जागरण** वाले साहित्य की शुरूआत यही से मानते हुए लिखते हैं कि, "षुक्ल जी का आदिकाल सामंतकाल के अंतर्गत है। किन्तु इसी काल में विद्यापति और खुसरो हुए। लोकजागरण वाले साहित्य की शुरुआत इन दो कवियों से माननी चाहिए।. . . लोक जागरण वाले साहित्य की धारा विद्यापति और खुसरो से आरम्भ होकर सूर तुलसी के अलावा सेनापति और रहीम को समेटती हुई रीतिमुक्त घनआनन्द तक प्रवाहित रहती है। भारतेन्दु हरिष्चन्द्र से जो नवजागरण शुरू होता है, वह नयी परिस्थितियों में पुराने लोक जागरण का विकास है।"[10]

इस तरह हम देखते हैं कि आदिकालीन साहित्य सामग्री को रामविलास शर्मा पहले दो भागों में बाँटते हैं अपभ्रंष साहित्य और देषी भाषा साहित्य। देषी भाषा साहित्य को पुनः दो भागों में बाँटते हैं–वीरगाथा काव्य और लोक जागरणा काव्य। अपभ्रंष साहित्य या अपभ्रंष प्रभावित को वे हिन्दी साहित्य में शामिल नहीं करते। लोक जागरण की प्रवृत्ति अभी प्रारम्भिक अवस्था में है। **ऐसी स्थिति में डॉ॰ रामविलास शर्मा आचार्ये शुक्ल द्वारा इसे 'वीरगाथा' काल नाम देने को उचित मानते हैं। 'वीरगाथा'** नाम को उचित मानते

हुए वे तर्क देते हैं कि, यदि उस काल में वीर रस को बहुत प्रमुख स्थान प्राप्त था तो उसे **'वीरगाथा काल'** कहना अनुचित क्यों है? द्विवेदी जी ने रीतिकाल नाम स्वीकार किया है, उस काल में बहुत सा रीतिमुक्त काव्य भी लिखा गया था। इससे वह नाम अनुचित नहीं हो गया।"[11] प्रवृत्तियों के आधार पर इसे वे सामंती युग अर्थात मध्यकाल मानते हैं। लेकिन इस सामंती ढांचे के गर्भ में पूँजीवाद का उदय हो चुका है लोक जागरण वाले साहित्य की षुरूआत इसी का प्रमाण है। यह साहित्य आधुनिकता का लक्षण है। वे आधुनिक काल की विषेषताएँ बताते हुए लिखते हैं, "सामाजिक स्तर पर इसका लक्षण है–सामंती व्यवस्था का विघटन, व्यापारिक पूँजीवाद का विकास, नये सामाजिक सम्बन्धों का प्रसार, साहित्यिक स्तर पर इसका लक्षण है–सामंत विरोधी प्रवृत्तियों का उद्‌भव और प्रसार नये मानवतावाद की प्रतिष्ठा।"[12]

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि तथाकथित आदिकाल में **सामंती साहित्य, सामंत प्रभावित साहित्य** एवं **सामंती प्रभाव से मुक्त साहित्य** की त्रिवेणी प्रवाहित है। अर्थात तीनों प्रकार के साहित्य का संगम है। हिन्दी के जातीय साहित्य के उद्‌भव काल में यह एक स्वाभाविक स्थिति है। वस्तुतः यह हिन्दी का आरम्भिक काल है और इसे शुक्ल जी द्वार दिया गया **'वीरगाथा काल'** नाम ही उचित है। डॉ॰ शर्मा इस युग का कोई अलग से प्रवृत्तिगत नामकरण नहीं करते हैं। इस नाम से आदिकाल का सम्पूर्ण परिदृश्य आचार्य द्विवेदी कातरह स्पष्ट भी नहीं हो पाता है।

;पपद्ध मध्यकाल : लोकजागरण काल

डॉ॰ रामविलास शर्मा का मानना है कि प्रत्येक युग में अनेक प्रवृत्तियों की उपस्थिति समान्तर रूप में होती है। यह बात अलग है कि उनमें से कोई एक प्रवृत्ति प्रमुख स्थान ले और अन्य गौण हो जाएँ। वे सभी प्रवृत्तियों को भी मुख्य रूप से दो भागों में ही बाँट कर देखते हैं। उनका मानना है कि प्रत्येक युग में मुख्य अन्तर्विरोध एक ही होता है। लोकवादी साहित्य और लोक विरोधी साहित्य हर युग में होता है और मुख्य अन्तर्विरोध भी इन्हीं के अन्तर्गत होता है। हिन्दी साहित्य में लोकवादी साहित्य धारा और रीतिवादी साहित्य धारा आरम्भ से ही विद्यमान रही हैं। क्योंकि, "व्यापारिक पूँजीवादी सामंती ढाँवे के भीतर पनपता है पर उसे तोड़ नहीं पाता, इस मूल सामाजिक परिस्थिति के अनुरूप साहित्य में रीतिवादी धारा और रीतिविरोधी धारा, लोकजागरण की धारा और सामंती रूढ़ियसों की धारा, समानांतर प्रवाहित रहती है। स्वभावतः वे एक–दूसरे को प्रभावित भी करती हैं। इन दो धाराओं की समानांतर प्रवाहमानता शुक्ल जी के विवेचन में विद्यमान है।"[13] इसी आधार पर वे आदिकाल और मध्यकाल में लोकवादी और रीतिवादी साहित्य की समान्तर उपस्थिति देखते हैं।

यही कारण है कि डॉ॰ रामविलास शर्मा पूर्व मध्यकाल अर्थात् **'भक्तिकाल'** तथा उत्तर मध्यकाल अर्थात **'रीतिकाल'** को दो अलग–अलग काल न मानकर एक ही काल की दो भिन्न प्रवृत्तियाँ मानते हैं। वे इन दोनों बल्कि कहना चाहिए कि तीनों कालों आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल–का अध्ययन एक साथ करना चाहते हैं क्योंकि इन कालों की सभी मुख्य प्रवृत्तियाँ सभी कालों में उपस्थित हैं। **उनकी दृष्टि में यह मध्यकाल न होकर आधुनिक काल का प्रथम चरण है। इस पूर्व आधुनिक काल को वे लोक जागरण नाम देना चाहते हैं।** वे आचार्य शुक्ल के आधार पर मानते हैं कि 'विषेष काल में नामकरण के विपरीत प्रवृत्तियों की रचना पर्याप्त मात्रा में होती है।' इसलिए विभिन्न कालखंडों में होने वाली एक प्रवृत्ति की रचनाओं का अध्ययन एक साथ ही करना चाहिए।[14]

डॉ॰ शर्मा इन कालखंडों में भक्ति और रीति की प्रवृत्तियों को आगे–पीछे न मानकर समान्तर काव्य धाराएँ मानते हैं। वे लिखते हैं कि, "इस दीर्घकाल खंड में साहित्य की दो परस्पर विरोधी धाराएँ एक–दूसरे से टकराती दिखाई देती हैं। मोटे–तौर पर एक है दरबारों में जुड़े हुए साहित्य की धारा, इसे हम **रीतिवादी धारा** कह सकते हैं, दूसरी दरबारों से बाहर सामान्य जनजीवन से जुड़े हुए साहित्य की धारा इसे हम **लोक जागरण की धारा** कह सकते हैं।"[15] भक्तिकाल लोक जागरण काव्य का एक भाग है। लोक जागरण काव्य का विस्तार भक्तिकाल के अलावा रीतिमुक्त कवियों तक है। वे इसे स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि, "भक्तिकाल को इस धारा से अलग करके देखने के कारण उसका विषद् प्रसार, उसकी गरिमा, उसका ऐतिहासिक महत्व आँखों से ओझल रहता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने रहीम की कविता का विवेचन करते समय अनेक बातों में उनकी तुलना तुलसीदास से की है। इससे स्पष्ट हो जाना चाहिए कि भक्त कवियों के साथ रीतिमुक्त कवियों का अध्ययन क्यों करना चाहिए।"[16] वे भक्तिकाल और रीतिकाल नाम को तर्कसंगत नहीं मानते क्योंकि इन नामों में सम्पूर्ण युग का प्रतिनिधित्व नहीं है। उनका तर्क है कि, "षुक्ल जी का पूर्व मध्यकाल 'भक्तिकाल' है। इस काल के कवियों में एक ओर रीतिवादी आचार्य केषवदास हैं, दूसरी ओर रीति और भक्ति दोनों की परिधि से बाहर सेनापति और रहीम हैं।. . . शुक्ल जी का उत्तर मध्यकाल उनका रीतिकाल भी है। रीतिकाल में एक ओर गुरु गोविन्दसिंह जैसे भक्त कवि हैं, दूसरी ओर घन आनन्द जैसे रीतिमुक्त कवि हैं।"[17]

डॉ॰ रामविलास शर्मा भक्त कवि कबीर, सूर, जायसी और तुलसी को महत्वपूर्ण मानते हैं। वे तुलसी के समकालीन कवि रहीम को इनके समक्ष महत्वपूर्ण कवि मानते हैं। रहीम, गिरधर और वैताल नीति काव्य के प्रतिनिधि कवि हैं। वे भक्ति कालीन कवि सेनापति से रीतिकालीन घनानंद को तुलनीय मानते हैं। भूषण और लाल रीतिकालीन होकर भी वीरगाथा की प्रवृत्ति को बढ़ा रहे हैं। सूदन रीतिकाल की प्रवृत्तियों

वीरगाथा की प्रवृत्तियों को अपनाते हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि इन भक्तिकालीन और रीतिकालीन कवियों को काल की प्रवृत्तियों में सीमित नहीं किया जा सकता है। इस काल के विस्तार और महत्व को रेखांकित करते हुए वे लिखते हैं कि, "जब हम खुसरो और विद्यापति से लेकर पद्माकर और घनानन्द तक रीतिवाद की सीमाएँ लाघने वाले ऐसे कवियों की गिनती करेंगे, तब लोक जागरण वाली काव्यधारा की दीर्घकालीन प्रवहमानता, उसकी विषद्ता और विविधता का पता चलेगा। इसमें स्वच्छंदतावादी प्रवृत्तियों हैं, यथार्थचित्रण की प्रवृत्तियों हैं, नीति विषयक रचनाएँ हैं, वीररस की कविताएँ हैं। भक्तिकाल इसकी शक्तिषाली प्रवृत्ति है किन्तु भक्तिकाल में ही और उसके बाद भी, यथार्थ, परक लोक कविता, भक्ति की सीमाएँ लांघती हुई विकसित होती है। रीतिवाद इस लोक जागरण धारा को जहाँ–तहाँ प्रभावित करता है पर वह स्वयं भी उससे प्रभावित होता है।"[18] उनका आषय यही है कि **भक्तिकाल और रीतिकाल का विभाजन केवल सैद्धांन्तिक स्तर पर ही उचित दिखाई देता है अन्यथा व्यवहारिक स्तर पर भक्तिकाल की कविता और रीतिकाल की कविता एक साथ उपस्थित है और बिना एक को समझे दूसरी को समझा ही नहीं जा सकता है।** वे स्वयं लिखते हैं कि, "रीतिवादी कविता का विकास इस लोक कविता को अलग रखकर नहीं समझा जा सकता।"[19]

बात दरअसल यह है कि इस युग में भक्ति और रीति ही नहीं नीति और वीररस की कविता साथ–साथ चल रही है। वैसे भी वे वीर और श्रृंगार परक रचनाओं को समान स्तर पर मानते हुए स्पष्ट करते हैं कि, "भक्तिकाल और रीतिकाव्य के समान्तर यह वीरगाथा काव्य की धारा भी बनी हुई है। वास्तव में वह भक्तिकाल से भिन्न है, रीतिवादी काव्य से सम्बन्ध है।. . . वीरगाथा काव्य में वीररस प्रमुख है, श्रृंगार रस गौण है। इतना ही अन्तर है।. . . रस चाहे वीर हो, चाहे श्रृंगार उसका वर्णन यथार्थ परक नहीं होता। सामंती काव्य रूढ़ियों से बंधे हुए कवि एक अत्यंत संकुचित कल्पना लोक में रहते हैं, चमत्कारी उक्तियों से, अलंकारों की भरमार से, वे श्रोताओं का मनोरंजन करते हैं।"[20]

कविता या साहित्य से विभिन्न प्रवृत्तियों का मूल उस समाज की सामाजिक संरचना एवं साहित्यिक परम्परा में देखा जा सकता है। लोक जागरण कविता के साथ रीतिवादी कविता की उपस्थिति का भी यही कारण है। सामंतवाद के विघटन के बाद भी वह पूरी तरह समाप्त नहीं हो सका था बल्कि कहना चाहिए की वह पुनः जीवित भी हुआ था। इसी का परिणाम है भक्तिकाल के बाद रीतिकाल का आगमन। डॉ॰ शर्मा स्वयं मानते हैं कि, "अपभ्रंष काव्य की रूढ़ियाँ **'वीरगाथा काल'** और **'रीतिकाल'** में पुनर्जीवित हुई, भक्तिकाल के साहित्य में उनका निषेध है।"[21]

डॉ॰ रामविलास शर्मा का मानना है कि आचार्य शुक्ल ने भले ही **'भक्तिकाल'** और **'रीतिकाल'** नामकरण कर दिया लेकिन उनका मूल्यांकन इस सीमा का अतिक्रमण करता है। इसलिए वे लिखते हैं कि, "षुक्ल जी अपना **'भक्तिकाल'** वाला नामकरण बरकरार रखते हुए उसे निरस्त करने के लिए जितने तर्क देते हैं, उतने दूसरा कोई क्या देगा।"[22] वे अपने **'लोकजागरण'** नाम की सार्थकता, औचित्य और महत्व के बारे में कहते हैं कि, "आत्मकल्याण और लोककल्याण करने वाले कर्मों की ओर जनता को भक्त कवि ले गये। इसलिए भक्तिकाल को **'लोक जागरण काल'** कहना उचित होगा। . . . **'लोक जागरण'** में रीतिमुक्त श्रृंगार है, सूफियों की **'बड़ी चुटीली और व्यंग्यकार पूर्ण बातें'** हैं और रहीम के **'वचन'** हैं। . . . लोक जागरण नाम की यह सार्थकता है, उसके अन्तर्गत हम हिन्दी के समस्त रीतिमुक्त काव्य का अध्ययन एक साथ कर सकते हैं। इस अध्ययन का रास्ता शुक्ल जी दिखा गये हें।"[23]

इस तरह हम देखते हैं कि डॉ॰ रामविलास शर्मा सम्पूर्ण मध्यकाल को तथा आदिकाल के भी कुछ भाग को आधुनिक काल का पूर्वार्ध मानते हैं जिसे वे **'लोक जागरण'** काल कहना चाहते हैं। लोक जागरण की कविता के समान्तर ही रीतिवादी कविता की उपस्थित करने मानते हैं तथा दोनों का एक साथ अध्ययन करने को उचित मानते हैं। **'लोक जागरण'** नाम उन्हें **'भक्तिकाल'** की तुलना में आधुनिकता के नजदीक लगता है तथा इसके अन्तर्गत भक्ति साहित्य से इतर साहित्य का अध्ययन भी संभव है इसके साथ–साथ वे अपने द्वन्द्ववादी सिद्धान्त को भी लागू कर पाते हैं। सबसे बड़ी सुविधा यह है कि इस नामकरण से नामकरण से इतर प्रवृत्तियों को भी महत्व मिल पायेगा जो कि मुख्य प्रवृत्ति के आधार पर नामकरण से उपेक्षित थी। फिर भी यह तो कहना ही पड़ेगा कि यह नामकरण या वर्गीकरण उतना सुव्यवस्थित नहीं है जितना आचार्य शुक्ल का था। इससे साहित्येतिहास के अनेक नये प्रष्न उठ खडे होते हैं।

;पपपद्ध आधुनिक काल : नवजागरण काल

लगभग सभी हिन्दी साहित्येतिहास ग्रंथों में मध्यकाल–भक्तिकाल, रीतिकाल–के बाद आधुनिक काल का विवेचन मिलता है। डॉ॰ रामविलास शर्मा हिन्दी साहित्य के इतिहास में आदिकाल को मध्यकाल तथा मध्यकाल को आधुनिक काल मानते हैं। उनका आधुनिक काल दो चरणों में विभाजित है। **पहला चरण** है पूर्व आधुनिक काल अर्थात **'लोक जागरण'** काल, **दूसरा चरण** है उत्तर आधुनिक काल अर्थात **'नवजागरण काल'**। इस तरह लगभग सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य आधुनिक काल के अन्तर्गत ही आ जाता है। शंभु नाथ उनके जागरण पर विचार करते हुए लिखते हैं कि, "रामविलास शर्मा की हिन्दी नवजागरण सम्बन्धी

अवधारणा की पहली बड़ी विषिष्टता है कि इसे उन्होंने 13वीं शताब्दी से ही विस्तृत निरन्तरता में देखा, यहा कहा कि भारतेन्दु हरिष्चन्द्र से जो नवजागरण शुरू होता है, वह नई परिस्थितियों में पुराने लोक जागरण का ही विकास है।. . . चौथी बड़ी विषिष्टता है, हिन्दी नवजागरण को पहले चरण में सामंतवाद विरोधी कहा गया और दूसरे चरण में सामंतवाद–साम्राज्यवाद–विरोधी।" उनकी यह अवधारणा इसलिए अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि अधिकांष विद्वान आधुनिकता को अंग्रेजी राज की देन मानते हैं। जबकि वे इस धारणा का जमकर विरोध करते हुए कहते हैं कि, "भारत में अंग्रेज न आए होते तो भी सांस्कृतिक नवजागरण संभव था।"[24] डॉ॰ शर्मा **अंग्रेजी साहित्य का संदर्भ** प्रस्तुत करते हुए लिखते हैं कि, "वास्तव में हमारा आधुनिक काल शुक्ल जी के पूर्व मध्यकाल का विकास है। किन्तु उत्तर मध्यकाल का निषेध है। इसी तरह अंग्रेजी का आधुनिक काल पुनर्जागणरा काल का विकास है, निओक्लासिकल युग का निषेध है। अंग्रेजी साहित्य के इतिहासकाल जिसे मध्यकाल कहते हैं, वह हमारे आदिकाल से मिलता जुलता है।"[25]

जैसे बांग्ला नवजागरण की विषेषता बुद्धिवाद, मराठी नवजागरण की दलित चेतना है उसी तरह हिन्दी नवजागरण की सबसे महत्वपूर्ण विषेषता साम्राज्यवाद विरोधी भावना है। डॉ॰ रामविलास शर्मा इस सम्बन्ध में कहते हैं कि, "आधुनिकता अंग्रेजी राज की देन नहीं है, उसका विकास इस राज के विरुद्ध संघर्ष के दौरान हुआ। वह अंग्रेजी साहित्य की नकल नहीं है, वह पुराने साहित्य की सामंत विरोधी उपलब्धियों की बुनियाद पर विकसित हुई है।. . . भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन विष्व साम्राज्य विरोधी क्रांति का अंग है, उसी तरह भारतीय साहित्य साम्राज्य विरोधी विष्व साहित्य का अंग है।"[26] युग के साहित्यकार अपना राजनैतिक सम्बन्ध पूर्व के लोकजागरण से जोड़ते हैं न कि अंग्रेजी साहित्य व अंग्रेजी राजनीति से। वे लिखते हैं कि, "भारत में अंग्रेजी राज की स्थापना के बाद राष्ट्रीय स्वाधीनता और सामाजिक परिवर्तन की आकांक्षा से प्रेरित साहित्य उसी लोकजागरण की धारा से जुड़ जाता है, वह आधुनिकता का नया चरण है, आधुनिकता की शुरूआत नहीं है।"[27] आधुनिकता का यह नया चरण है इसलिए लोकजागरण से अनेक दृष्टियों से भिन्नता भी रखता है, उसका अपनी स्वतंत्र पहचान और महत्व है। रामविलास शर्मा के नवजागरण पर विचार करते हुए मैनेजर पांडेय इस अन्तर को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि, "भक्ति आन्दोलन और 19वीं शताब्दी से आरम्भ होने वाले नवजागरण का मुख्य अन्तर यह है कि पहला जातीय निर्माण को व्यक्त करने वाला सांस्कृतिक आन्दोलन है, जिसका मुख्य स्वर सामंतवाद

विरोधी तथा मानवतावादी है दूसरा राष्ट्रीय स्वाधीनता का सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक आन्दोलन है, जिसका मुख्य स्वर साम्राज्यवाद विरोधी तथा सामंतवाद विरोधी है।"[28]

हिन्दी साहित्येतिहास ग्रंथों में आधुनिक काल की शुरुआत भारतेन्दु से मानते हैं, फिर द्विवेदी युग, छायावाद, प्रगतिवाद, नई कविता से रामकालीन कविता तक पहुँचता है। डॉ॰ रामविलास शर्मा नवजागरण का प्रारम्भ सन् 1857 से मानते हैं। उनकी दृष्टि में नवजागरण के प्रमुख स्वर का मूल प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में ही है लेकिन वह आज केवल लोक कविता या लोक संगीत में ही सुरक्षित रह गया है। यह बात अलग है कि वह आगे के साहित्य का स्रोत रहा है। नवजागरण की वास्तविक शुरुआत होती है भारतेन्दु हरिष्चन्द्र से। नवजागरण साहित्य के भवन की नींव वास्तव में भारतेन्दु हरिष्चन्द्र द्वारा ही भरी गई थी। द्विवेदी युग में नवजागरण की भावना अपनी चरम सीमा की ओर अग्रसर थी। साहित्य में विविध विषयों का समावेष हो रहा था। कविता के क्षेत्र में खड़ी बोली अपना स्थान बनाती है। नवजागरण का हर दृष्टि से चरम विकास छायावाद में ही देखने को मिलता है। निराला के साहित्य में यह सम्पूर्ण रूप में देखा जा सकता है। इस तरह डॉ॰ रामविलास का नवजागरण काल या आधुनिक काल का द्वितीय चरण 1857 के स्वाधीनता आन्दोलन से छायावाद तक सीमित है। इसकी रूपरेखा बनाते हुए वे लिखते हैं कि, "जो नवजागरण 1857 के स्वाधीनता संग्राम से शुरू हुआ, वह भारतेन्दु युग में और व्यापक बना, उसकी साम्राज्यवाद विरोधी, सामंत विरोधी प्रवृत्तियों द्विवेदी युग में और पुष्ट हुई। फिर निराला के साहित्य में कलात्मक स्तर पर तथा उनकी विचारधारा में ये प्रवृत्तियाँ क्रांतिकारी रूप में व्यक्त हुई है।"[29] स्पष्ट है कि वे 1857 के स्वतंत्रता संग्राम को नवजागरण का प्रथम चरण, भारतेन्दु युग को द्वितीय चरण, द्विवेदी युग को तृतीय चरण तथा छायावाद को चतुर्थ चरण मानते हैं। "उन्होंने इन चारों चरणों का विस्तृत विवेचन करते हुए हिन्दी नवजागरण और उसके साहित्य की प्रमुख विषेषताओं को स्पष्ट किया है।"[30]

;पअद्ध प्रगतिषील साहित्य और पद्य

हिन्दी साहित्येतिहास ग्रंथों में छायावाद के बाद की कविता को छायावादोत्तर साहित्य के नाम से जाना जाता है जिसमें प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नई कविता, साठोत्तर कविता और समकालीन कविता आन्दोलन शामिल किये जाते हैं। डॉ॰ रामविलास शर्मा छायावाद के वाद प्रगतिषील कविता को कविता की मुख्यधारा मानते हैं। वे अपने द्वन्द्ववाद के मूल सिद्धान्त के अनुरूप इस युग की सम्पूर्ण कविता को प्रगतिषील और प्रगति विरोधी कविता के रूप में ही पहचानते हैं।

डॉ॰ रामविलास शर्मा साहित्य के सामाजिक आधार को साहित्येतिहास लेखन व साहित्य मूल्यांकन लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण मानते हैं। उनका सिद्धान्त है कि साहित्य की प्रत्येक प्रवृत्ति का कोई न कोई वर्ग आधार अवष्य होता है तथा समाज में एक समय में एक ही मुख्य अन्तर्विरोध होता है। इतिहासकार का दायित्व है कि वह तत्कालीन समाज के मुख्य अन्तर्विरोध की पहचान कर उसी आधार पर साहित्य की पहचान स्थापित करें। **डॉ॰ शर्मा आधुनिक काल के प्रथम चरण का मुख्य स्वर सामंतवाद विरोध, द्वितीय चरण का सामंतवाद–साम्राज्यवाद विरोध तथा तृतीय चरण का मुख्य स्वर पूँजीवाद का विरोध मानते हैं।** लोक जागरण काल में जिस तरह सामंतवाद मानव मुक्ति में बाधक, नवजागरण काल में सामंतवाद–साम्राज्यवाद का गठजोड़ मानव मुक्ति से बाधक ठीक उसी तरह उसके बाद समाजवादी समाज की स्थापना में पूँजीवाद बाधक था। इसलिए उस वक्त सामाजिक स्तर पर और साहित्यिक स्तर पर मुख्य अन्तर्विरोध समाजवादी व पूँजीवादी विचारधारा के मध्य था। इसलिए डॉ॰ शर्मा छायावाद के बाद की कविता को प्रगतिषील कविता और प्रगतिविरोधी कविता के रूप में देखते हैं। जिस तरह लोक जागरण काल में लोकवादी और रीतिवादी कविता थी, नवजागरण काल में साम्राज्यविरोधी और साम्राज्य समर्थक कविता थी, ठीक उसी तरह छायावाद के बाद पूँजीवाद विरोधी व पूँजीवाद समर्थक कविता थी। जिस तरह नवजागरण कालीन साहित्य विष्व साम्राज्यवाद विरोधी आन्दोलन का अंग था ठीक उसी तरह प्रगतिषील साहित्य भी विष्व व्यापी समाजवादी आन्दोलन का एक भाग था।

डॉ॰ रामविलास शर्मा के अनुसार पद्य में निराला के साहित्य में प्रगतिषील चेतना को भरपूर स्थान मिला है। वे निराला, नरेन्द्र शर्मा रामधारी सिंह दिनकर, षिवमंगल सिंह सुमन, तार सप्तक के कवि, नागार्जुन, केदारनाथ त्रिलोचन को प्रगतिषील काव्यधारा के प्रमुख कवि मानते हैं। इसके विपरीत नई कविता के प्रतिनिधि कवि अज्ञेय, नेमीचन्द जैन, विजदेव नारायण शाही, जगदीष गुप्त, लक्ष्मीकान्त वर्मा, धर्मवीर भारती व्यक्तिवादी, अस्तित्ववादी तथा पूँजीवादी समर्थक कवि मानते हैं। यहाँ ध्यान रखने लायक बात है कि इसके बाद की कविता पर डॉ॰ रामविलास शर्मा अपना ध्यान केन्द्रित नहीं करते हैं।

;अद्ध प्रगतिषील साहित्य और गद्य

गद्य साहित्य के विवेचन में डॉ॰ रामविलास शर्मा यथार्थवादी साहित्य की कोटियाँ निर्धारित करते हैं। वे उस साहित्य विषेषकर उपन्यास को पसन्द करते हैं या कहें कि मुख्यधारा का साहित्य मानते हैं जो सामाजिक समस्याओं को यथार्थवादी ढंग से प्रस्तुत करे, जिसमें आम जनता, पीड़ित जनता विषेषकर किसान–मजूदर की स्थितियों का चित्रण था। वे व्यक्तिवादी कुंठाओं के नाम पर अष्लील वर्णन को के

साहित्य की अस्वस्थ, प्रगतिविरोधी और पतनषील प्रवृत्ति मानते हैं। वे सामाजिक यथार्थ को अभिव्यक्ति देने वाली तथा वैयक्तिक कुंठाओं को अभिव्यक्ति देने वाली रचनाओं के मध्य द्वन्द्व मानते हैं। उनकी दृष्टि में प्रेमचन्द, निराला, अमृतलाल नागर, वृंदावन लाल वर्मा की तथा नागर्जुन की धारा यथार्थवादी तथा अज्ञेय, जैनेन्द्र की धारा व्यक्तिवादी कुंठाओं की धारा है। यषपाल, रांगेयराघव जैसे प्रगतिषील साहित्यकार भी अनेक कारणों से उनके निषाने पर रहें हैं। इस तरह उनके पद्य व गद्य की मुख्य चेतना प्रगतिषीलता है जो दोनों को एक साथ जोड़ती है।

ध्यान देने योग्य बात यह है कि छायावादोत्तर युग डॉ॰ रामविलास शर्मा के साहित्य में नहीं बल्कि राजनैतिक क्षेत्र में पदार्पण का समय हैं। उनकी राजनैतिक सक्रियता और प्रतिबद्धता के परिणाम स्वरूप वे छायावादोत्तर साहित्य में केवल राजनैतिक दृष्टि से अनुकूल साहित्य को ही साहित्य की मुख्यधारा मानते हैं। यह संकीर्ण दृष्टिकोण एक साहित्येतिहासकार की लिए किसी की दृष्टि से उचित नहीं कहा जा सकता।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि डॉ॰ रामविलास शर्मा के कालविभाजन के अनुसार लगभग समस्त हिन्दी साहित्य आधुनिक काल के अन्तर्गत आ जाता है क्योंकि आधुनिक जातियों का गठन, आधुनिक जातीय भाषाओं का विकास एवं उनके साहित्य का उद्‌भव सामाजिक विकास की मंजिल के अनुसार मध्यकाल का अवसान और व्यापारिक पूँजीवाद का प्रारम्भ है। सामाजिक विकास की मंजिलों को अनुरूप साहित्येतिहास का काल विभाजन करने पर यह आधुनिक काल ही ठहरता है। यह बात अलग है कि जातीय विकास एवं पूँजीवाद के विभिन्न चरणों के अनुरूप इस हिन्दी साहित्य के इतिहास के इस आधुनिक काल के भी तीन चरण होते हैं। **प्रथम चरण** में जातीय निर्माण की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है जिसमें एक जनपद दूसरे जनपद से आर्थिक और सांस्कृतिक सम्बन्ध स्थापित करता है जिसके परिणाम स्वरूप भाषाओं में अन्तर्जनपदीय व्यवहार प्रारम्भ होता है। **द्वितीय चरण** में मषीनी उत्पादन, षिक्षा के प्रसार व मजबूत आर्थिक सम्बन्धों के कारण नगरों में मध्यवर्ग के उदय से साहित्य में महत्वपूर्ण परिवर्तन होते हैं। **तृतीय चरण** में समाज में समाजवादी चेतना का प्रसार होता है। स्पष्ट है कि हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल का प्रथम चरण लोक जागरण का, द्वितीय चरण नवजागरण का और तृतीय चरण प्रगतिषील चेतना का है।"[31] पहला चरण सामन्तवाद के विरुद्ध भक्ति आन्दोलन का है जिसका स्वरूप सांस्कृतिक था तथा वह साधु सन्तों के नेतृत्व में सम्पन्न हुआ; दूसरा चरण ब्रिटिष आन्दोलन का है जो मूलतः राजनैतिक था तथा जिसका नेतृत्व देषभक्त और बुद्धिजीवियों के हाथ में था; तीसरा चरण पूँजीवाद के विरुद्ध समाजवादी आन्दोलन का था जो मूलतः सामाजिक आन्दोलन था तथा जिसका नेतृत्व किसान–मजदूर तथा उनके

हितैषी वर्ग के हाथ में था। इन तीनों चरणों में सतत विकास की अवधारणा देखी जा सकती है तथा यह प्रक्रिया अखिल भारतीय स्तर पर सम्पन्न हो रही है लेकिन इसका नेतृत्व लगभग हिन्दी प्रदेष के हाथों में रहा है।

हिन्दी साहित्य के काल विभाजन और नामकरण का प्रारूप

डॉ॰ रामविलास शर्मा हिन्दी साहित्येतिहास का न तो कोई व्यवस्थित इतिहास ग्रंथ लिखा है और न ही कोई व्यवस्थित और परिपूर्ण कालविभाजन व नामकरण किया है। उन्होंने इस सम्बन्ध में भिन्न–भिन्न पुस्तकों तथा भिन्न संदर्भों में जो विचार व्यक्त किये हैं, उन्हें संकलित–सम्पादित कर उनकी दृष्टि से कालविभाजन और नामकरण का प्रारूप तैयार किया जा सकता हैं। हालांकि जैसे हम पूर्व में कह आये हैं कि वे शुक्ल जी के काल–विभाजन को अब तक का सबसे व्यवस्थित काल विभाजन मानते हैं। वे उसे और अन्य को अपने दृष्टिकोण के चलते संषोधित करना चाहते थे। उनके संषोधित कालविभाजन और नामकरण का प्रारूप कुछ इस प्रकार हो सकता है –

(अ) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का काल विभाजन

1. आदिकाल (वीरगाथा काल) – संवत 1050 से 1375

(i) अपभ्रंष काल

(ii) देषभाषा काल (वीरगाथा काल)

(iii) फुटकल रचनाएँ – लोकभाषा के पद्य, खुसरो, विद्यापति

2. पूर्व मध्यकाल (भक्तिकाल) संवत 1375 से 1700 तक

(i) निर्गुण धारा – ज्ञानाश्रयी शाखा, प्रेममार्गी शाखा (सूफी)

(ii) सगुण धारा – रामभक्ति शाखा, कृष्ण भक्ति शाखा, भक्ति काल की फुटकल रचनाएँ

3. उत्तर मध्यकाल (रीतिकाल) संवत 1700 से 1900 तक

(i) रीतिग्रंथकार कवि

(ii) रीतिकाल के अन्य कवि

4. आधुनिक काल (गद्यकाल) संवत 1900 से 1984

(i) गद्य साहित्य – प्रथम उत्थान, द्वितीय उत्थान, तृतीय उत्थान

(ii) काव्य खण्ड – प्रथम उत्थान, द्वितीय उत्थान, तृतीय उत्थान[32]

(ब) डॉ. गणपति चन्द्र गुप्त का काल विभाजन

1. आदिकाल – सातवीं सदी के मध्य से चौदहवी सदी के मध्य तक

2. भक्तिकाल – चौदहवीं सदी के मध्य से सत्रहवीं सदी के मध्य तक

3. रीतिकाल – सत्रहवीं सदी के मध्य से उन्नीसवीं सदी के मध्य तक

4. आधुनिक काल – उन्नीसवीं सदी के मध्य से अब तक

(i) पुनर्जागरण काल (भारतेन्दु काल) 1857–1900 ई॰

(ii) जागरण काल (द्विवेदी काल) 1900–1918 ई॰

(iii) छायावाद काल 1918–1938 ई॰

(iv) छायावादोत्तर काल

(v) प्रगति–प्रयोग काल 1938–1953 ई॰

(vi) नवलेखन काल 1953–अब तक[33]

(स) डॉ. रामविलास का काल विभाजन

1. **मध्यकाल :** चारण काल (11वीं सदी के मध्य से 16वीं सदी के मध्य तक)

(i) अपभ्रंष भाषा काव्य

(ii) देषी भाषा साहित्य – वीरगाथा काव्य, लोक जागरण काव्य

2. **आधुनिक काल** (16वीं सदी के मध्य से अब तक)

(i) पूर्व आधुनिक काल (प्रथम चरण) : लोकजागरण युग (16वीं सदी के मध्य से 19वीं सदी के मध्य तक)

- लोक जागरण काव्य – भक्ति साहित्य, नीति साहित्य, रीतिमुक्त साहित्य
- दरबारी काव्य – रीति साहित्य, वीर रस साहित्य

(ii) उत्तर आधुनिक काल (द्वितीय चरण) : नवजागरण युग (19वीं सदी के मध्य से 20वीं सदी के मध्य तक)

□□गदर युग □□भारतेन्दु काल □□द्विवेदी काल □□छायावाद काल

(iii) छायावादोत्तर काल (तृतीय चरण) : प्रगतिषील युग (जनजागरण युग)

- प्रगतिशील काव्य□□□प्रगतिषील गद्य

डॉ॰ रामविलास शर्मा के काल विभाजन को लेकर हिन्दी साहित्य जगत में कोई गंभीर विचार विमर्ष नहीं हुआ है। जबकि उन्होंने एक दिषा में गंभीर विमर्ष किया था। दुर्भाग्य यह रहा कि डॉ॰ शर्मा अपनी कल्पना के अनुरूप कोई व्यवहारिक साहित्येतिहास नहीं लिख सके और न ही कोई सम्पूर्ण कालविभाजन और नामकरण का प्रयास किया। अधूरे प्रयासों के कारण आज इस सम्बन्ध में उनके विचार उपेक्षित हैं। उनकी साहित्येतिहास दृष्टि पर डॉ॰ मैनेजर पांडेय ने काफी हद तक गंभीर विमर्ष करने की कोषिष की डॉ॰ शर्मा के कालविभाजन पर वे लिखते हैं कि, "नौ सौ वर्षों के इतिहास को केवल आधुनिक काल का अखण्ड प्रवाह बना देना तो हिन्दी साहित्य के काल विभाजन की समस्या का कोई समाधान नहीं हुआ।"[34] डॉ॰ रामविलास शर्मा ने इस आरोप का उत्तर दिया है कि, "यदि काल को अखंड प्रवाह बना दें और उसमें प्रवृत्तियों के अनुसार विभाग न करें तो समस्या का समाधान न होगा, वह कालखंड चाहे दस साल का ही हो।. . . आधुनिक काल को पूर्व और उत्तर में बाँटा जा सकता है।. . . इन दो खंडों के अन्तर्गत प्रवृत्तियों के अनुसार यथावष्यक विभाग बनाये जा सकते हैं।"[35] स्पष्ट है कि डॉ॰ शर्मा अपने काल विभाजन और नामकरण पर अडिग हैं। हिन्दी जगत को इस पर गंभीरता पूर्वक विचार करना चाहिए। लेकिन डॉ॰ पाण्डेय का यह कहना उचित है कि डॉ॰ शर्मा ने नवजागरण और प्रगतिषील आन्दोलन का सम्बन्ध स्पष्ट नहीं किया है जबकि प्रगतिषील आन्दोलन भी नवजागरण का अगला चरण ही है।

डॉ॰ रामविलास शर्मा ने काल विभाजन पर विचार करते समय हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि उन्होंने हिन्दी साहित्य के इतिहास का पूर्ण कालविभाजन न कर चयनित अंषों पर ही अपना ध्यान केन्द्रित किया है इसलिए वह इतना सुव्यवस्थित नहीं है। दूसरे वे आदि, मध्य व आधुनिक जैसा वर्गीकरण समाज के विकास व आखिल भारतीय सन्दर्भ में करते हैं। परिणामस्वरूप वे आधुनिक भाषाओं के साहित्येतिहास में आदिकाल व मध्यकाल की उपस्थिति अनिर्वाय नहीं मानते। तीसरे वे साहित्येतिहास का नामकरण

साहित्यिक प्रवृत्तियों के आधार पर रखना चाहते हैं लेकिन सामाजिक परिघटनाओं को भी वे इस दृष्टि से उपयोगी मानते हैं।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि उनके द्वारा प्रस्तावित आधुनिक काल की कितनी भी बुराई की जाए लेकिन उनके तर्कों को हवा में नहीं उड़ाया जा सकता। लोक जागरण और नवजागरण जैसे नामकारण अपनी व्याप्ति, मौलिकता और व्यंजना के कारण काफी लोकप्रिय हो चुके हैं। भविष्य में नामकरण के प्रसंग में इनकी उपेक्षा संभव नहीं है। साहित्येतिहास की दृष्टि से डॉ॰ रामविलास शर्मा का यह योगदान कम महत्वपूर्ण नहीं है। **उनका यह कालविभाजन और नामकारण मार्क्सवादी, राष्ट्रीय और जातीयता की अवधारणाओं की आधारभूमि पर अंकुरित और पल्लवित हुआ है।**

संदर्भ सूची

1 jkefoykl 'kekZ & vkpk;Z jkepUæ 'kqDy vkSj fgUnh vkykspuk] i`ñ 170

2 jkefoykl 'kekZ & vkpk;Z jkepUæ 'kqDy vkSj fgUnh vkykspuk] i`ñ 171

3 jkefoykl 'kekZ & vkpk;Z jkepUæ 'kqDy vkSj fgUnh vkykspuk] i`ñ 172

4 eSustj ik.Ms; & lkfgR; vkSj bfrgkl –f"V] i`ñ 171

5 jkefoykl 'kekZ & Hkkjrh; lkfgR; ds bfrgkl dh leL;k,¡] i`ñ 145&146

6 jkefoykl 'kekZ & Hkkjrh; lkfgR; ds bfrgkl dh leL;k,¡] i`ñ 145

7 jkefoykl 'kekZ & fgUnh tkfr dk lkfgR;] i`ñ 35

8 jkefoykl 'kekZ & fgUnh tkfr dk lkfgR;] i`ñ 139

9 jkefoykl 'kekZ & fgUnh tkfr dk lkfgR;] i`ñ 140

10 jkefoykl 'kekZ & fgUnh tkfr dk lkfgR;] i`ñ 140

11 jkefoykl 'kekZ & yksd tkxj.k vkSj fgUnh dkO;] i`ñ 41

12 jkefoykl 'kekZ & yksd tkxj.k vkSj fgUnh dkO;] i`ñ 41

13 jkefoykl 'kekZ & fgUnh tkfr dk lkfgR;] i`ñ 140&141

14 jkefoykl 'kekZ & yksd tkxj.k vkSj fgUnh dkO;] i`ñ 12

15 jkefoykl 'kekZ & fgUnh tkfr dk lkfgR;] i`ñ 10

16 jkefoykl 'kekZ & fgUnh tkfr dk lkfgR;] i`ñ 10

17 jkefoykl 'kekZ & fgUnh tkfr dk lkfgR;] i`ñ 140

18 jkefoykl 'kekZ & fgUnh tkfr dk lkfgR;] i`ñ 149

19 jkefoykl 'kekZ & fgUnh tkfr dk lkfgR;] i`ñ 149

20 jkefoykl 'kekZ & fgUnh tkfr dk lkfgR;] i`ñ 141&142

21 jkefoykl 'kekZ & fgUnh tkfr dk lkfgR;] i`ñ 35&36

22 jkefoykl 'kekZ & fgUnh tkfr dk lkfgR;] i`ñ 149

23 jkefoykl 'kekZ & yksd tkxj.k vkSj fgUnh dkO;] i`ñ 10&12

24 'kaHkqukFk & m)`r fgUnh uotkxj.k vkSj laLÑfr] i`ñ 171

25 jkefoykl 'kekZ & fgUnh tkfr dk lkfgR;] i`ñ 150

26 jkefoykl 'kekZ & fgUnh tkfr dk lkfgR;] i`ñ 10

27 jkefoykl 'kekZ & fgUnh tkfr dk lkfgR;] i`ñ 10

28 eSustj ik.Ms; & lkfgR; vkSj bfrgkl –f"V] i`ñ 190

29 jkefoykl 'kekZ & egkohj çlkn f}osnh vkSj fgUnh uotkxj.k] i`ñ 19

30 eSustj ik.Ms; & lkfgR; vkSj bfrgkl –f"V] i`ñ 190

31 jkefoykl 'kekZ & Hkkjrh; lkfgR; ds bfrgkl dh leL;k,¡] i`ñ 53&54

32 vkpk;Z jkepUæ 'kqDy & fgUnh lkfgR; dk bfrgkl] i`ñ 1

33 fgUnh lkfgR; dk bfrgkl] lañ MkWñ uxsUæ] i`ñ 44&45

34 eSustj ikaMs; & lkfgR; vkSj bfrgkl –f"V] i`ñ 174

35 jkefoykl 'kekZ & HkkjrsUnq gfj'pUæ vkSj fgUnh uotkxj.k dh leL;k,¡] i`ñ 29&30